पर्यावरण शिक्षा – आवश्यकता एवं प्रारूप

रश्मि श्रीवास्तव*

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में पर्यावरण प्रदूषण एक ऐसी समस्या है, जिससे संपूर्ण विश्व ग्रस्त है। स्थितियाँ बद् से बद्तर हो जाएँ, उससे पूर्व ही इस दिशा में आवश्यक कदम उठाए जाने चाहिए। शिक्षा को इस दिशा में एक महत्वपूर्ण साधन के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है। आज यह ज़रूरी दिखाई देता है कि आधुनिक जीवन शैली के विस्तार व विकास की गति के साथ तालमेल बिठाने के क्रम में अपनी प्रकृति के साथ ज़्यादा छेड़-छाड़ न की जाए। नवीन वैज्ञानिक खोजों के साथ यह ज़रूर देखा जाए कि उनके प्रयोग से पर्यावरण को नुकसान न हो। उनसे प्राप्त लाभ का वजन उनसे होने वाली हानि से कहीं कम हो। विकास व विस्तार की गति के साथ पर्यावरण के साथ कोई समझौता न स्वीकार करने की मानसिकता पर्यावरण शिक्षा के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाई जा सकती है। अतः इस दिशा में हर संभव प्रयास किए जाने चाहिए।

ईश्वर प्रदत्त इस धरती पर जहाँ हमने जन्म लिया है, उसे प्रायः इस कदर अपना समझते हैं कि इसके साथ कहाँ नाइंसाफी कर बैठें समझ ही नहीं पाते। एक छोटा बच्चा राह चलते अपनी हर चीज़ माँ को थमा देता है। माँ तू इसे पकड़, इसे भी और इसे भी। इस पकड़-पकड़ाई में बच्चा यह नहीं देखता कि माँ तो थक रही है। उस पर उसने इतनी चीज़ें लाद दी हैं कि उसका चलना मुश्किल हो रहा है। अपनी धरती, अपनी प्रकृति के साथ हम मनुष्यों ने भी कुछ ऐसा ही किया है। उसके देने को बढ़े हाथों पर हमने अपनी ज़रूरतों की इतनी सारी माँगों का बोझ लाद दिया है कि स्थितियाँ गड़बड़ा गयी हैं। इस असंतुलन ने पर्यावरण प्रदूषण को जन्म दिया है। यहाँ पर्यावरण शब्द पर ध्यान दें। पर्यावरण शब्द 'परि' और 'आवरण' दो शब्दों से मिलकर बना है। परि का अर्थ है चारों ओर और आवरण का अर्थ है ढका हुआ। अर्थात् पर्यावरण शब्द का आशय हमारे चारों ओर पाए जाने वाले सामाजिक, सांस्कृतिक एवं प्राकृतिक वातावरण से है। हमारी शिक्षा व्यवस्था सामाजिक एवं सांस्कृतिक पर्यावरण के प्रति सदैव संवेदनशील रही है किंतु प्राकृतिक पर्यावरण के प्रति शिक्षा व्यवस्था में उपेक्षा की स्थिति दिखाई देती है, आज तेज़ी से हुए औद्योगिक विकास ने प्राकृतिक वातावरण को असंतुलित किया है। हालत यह है कि आज पीने के पानी को शुद्ध

**असिस्टेंट प्रोफ़ेसर* (बी.एड.), महिला विद्यालय डिग्री कालेज, लखनऊ (उ.प्र.)

किए बिना पानी पीना संभव नहीं है। बड़ी-बड़ी मिलों और फ़ैक्ट्रियों में अपशिष्ट जल बगैर साफ़ किए नदी-नालों में यूँ ही बहा दिए जा रहे हैं। पानी में अनेक रसायनों तथा आपत्तिजनक स्रावों से वह दूषित हो रहा है जो कि समुद्री जीवों के लिए भी हानिकारक है। मिलों–फ़ैक्ट्रियों से निकलने वाले धुएँ और गैसों ने एक ओर जहाँ वायु को दूषित किया है वहीं रासायनिक खाद और कीटनाशक दवाइयों के प्रयोग से मिट्टी की उर्वरता कम हो रही है। अर्थात् सभ्यता के विकास और अपनी जीवन शैली को आधुनिक, सुविधासंपन्न बनाने के क्रम में हमने प्राकृतिक संसाधनों का दोहन तो किया ही है, उन्हें दूषित भी किया है। यही हमारी ज़िम्मेदारी आने वाली पीढ़ियों के लिए बढ़ जाती है। यह ज़रूरी दिखाई देता है, कि भावी पीढ़ी को विज्ञान व तकनीकी का ज्ञान देने के साथ-साथ उनके प्रयोग में आवश्यक सावधानी बरतने की दिशा भी दिखाई जाए। यहीं हमारी शिक्षा व्यवस्था पर एक बड़ी ज़िम्मेदारी यह भी बढ़ जाती है कि वह बच्चों तथा बड़ों को पर्यावरण संरक्षरण के प्रति भी सजग बनाये।

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में इसे पर्यावरण शिक्षा का नाम दिया गया है। वास्तविकता यह है कि इस दिशा में किए गए प्रयास बहुत प्रभावपूर्ण नहीं हो सके हैं, जिससे पर्यावरण शिक्षा अपने लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकी है। अत: आवश्यक प्रतीत होता है कि पर्यावरण शिक्षा को और अधिक व्यवहारिक व रुचिपूर्ण बनाया जाए, इसकी संक्षिप्त विवेचना निम्नवत् है। यहाँ सबसे पहले दृष्टि डालें कि पर्यावरण शिक्षा है क्या? और इसके लिए क्या प्रयास किए जा रहे हैं?

IUCN (1970) के सेमिनार में पर्यावरण शिक्षा को स्पष्ट करते हुए कहा गया था, ''पर्यावरण शिक्षा के दायित्वों को जानने तथा विचारों को स्पष्ट करने की वह प्रक्रिया है जिससे मनुष्य अपनी संस्कृति और जैव-भौतिकी परिवेश के मध्य अपने आपकी संबद्धता को पहचानने और समझने के लिए आवश्यक कौशल और अभिवृत्ति का विकास कर सके। पर्यावरण शिक्षा पर्यावरण की गुणवत्ता से संबंधित प्रकरणों के लिए व्यवहारिक संहिता निर्माण करने तथा निर्णय लेने की आदत को भी व्यवस्थित करती है।''[1]

अमेरिका के कीले विश्वविद्यालय ने सर्वप्रथम पर्यावरण को पाठ्यक्रम के अभिन्न अंग के रूप में स्वीकार किया। 1972 में संयुक्त राष्ट्र संघ के द्वारा स्टॉकहोम (स्वीडन) में आयोजित 119 देशों के सम्मेलन में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (UNEP) का जन्म हुआ। संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक पर्यावरण कार्यक्रम (UNEP) ने संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक विज्ञान और सांस्कृतिक परिषद् (UNESCO) के सहयोग से एक नयी कार्य संस्था इंटरनेशनल एनवायरनमेंटल एजुकेशन प्रोग्राम (IEEP) का गठन किया इस संस्था ने पर्यावरण शिक्षा की वैज्ञानिक रूपरेखा निर्मित कर कार्य को गति दी। इसके तहत कार्यक्रम को निम्नांकित स्वरूपों में विभाजित किया गया।

- कार्यक्रम के लिए विश्व के देशों का वर्गीकरण।
- अंतर्राष्ट्रीय और क्षेत्रीय स्तर की बैठकों का आयोजन।
- अंतर्राष्ट्रीय और क्षेत्रीय बैठकों में सहयोग अध्ययन, सर्वेक्षण व शोध कार्य।

- पर्यावरण संबंधी साहित्य का प्रकाशन।
- शिक्षण प्रशिक्षण हेतु विशेष कार्यक्रम।

यहाँ विशेष बात यह है कि भारत भी (IEEP) के कार्यक्षेत्र का हिस्सा बना और मार्च 1983, फरवरी 1985, अप्रैल 1987 एवं फरवरी 1989 में IEEP के सहयोग से भारत में विभिन्न कॉन्फ्रेंस और कार्यगोष्ठियाँ आयोजित की गयीं। आज भारत देश पर्यावरण शिक्षा के प्रति संवेदनशील है और इस दिशा में आवश्यक कदम उठाने को तत्पर है।

पर्यावरण शिक्षा का उद्देश्य

यूँ तो भारत में पर्यावरण संरक्षण व उससे प्रेम की भावना एक सांस्कृतिक विरासत रही है। भारत के विभिन्न व्रत, त्योहारों में प्रकृति संरक्षण का संदेश समाहित होता है, किंतु तीव्र औद्योगीकरण और आधुनिकीकरण के साथ बदलती सामाजिक व्यवस्थाओं ने जनसामान्य में पर्यावरण के प्रति उदासीनता का भाव विकसित किया है, यही कारण है कि हमें भी पर्यावरण शिक्षा को बढ़ावा देने का प्रयास करना होगा।

IEEP द्वारा आयोजित प्रथम अंतर्राष्ट्रीय पर्यावरण शिक्षा कार्यगोष्ठी, जो कि 1975 में 13 से 22 अक्तूबर तक मध्य बेलग्रेड (यूगोस्लाविया) में संपन्न हुयी पर्यावरण शिक्षा के लक्ष्य एवं उद्देश्य निर्धारण में सर्वाधिक सफ़ल रही थी। इस कार्यगोष्ठी में बने बेलग्रेड घोषणा पत्र (Belgrade Charter) ने पर्यावरण शिक्षा के लक्ष्य व उद्देश्य के विस्तृत क्षेत्र की तरफ़ हमारा ध्यान आकृष्ट किया।

बेलग्रेड कार्यगोष्ठी में विभिन्न दस्तावेज़ों को अंतिम रूप दिया गया, जो आगे चलकर तिविलिसी (14–26 अक्तूबर 1977) अंतर्राज्यीय कॉन्फ्रेंस का आधार बने। इन ढेरों प्रक्रियाओं के परिणामस्वरूप, क्षेत्रीय बैठकों, सम्मेलनों की अनुशंसा के आधार पर पर्यावरण शिक्षा के निम्नांकित प्रमुख उद्देश्य निर्धारित हुए।[2]

1. पर्यावरण शिक्षा सभी व्यक्ति व समाज को संपूर्ण पर्यावरण और उससे संबंधित समस्याओं के प्रति जागरूकता और संवेदनशीलता देने में सहायक हो।
2. पर्यावरण शिक्षा सभी व्यक्ति, समाज व समुदाय को संपूर्ण पर्यावरण और उससे संबंधित समस्याओं की आधारभूत समझ प्राप्त करने व उसमें मनुष्य की ज़िम्मेदारी की भूमिका निभाने में सहायक हो।
3. पर्यावरण शिक्षा सभी व्यक्ति, समाज और समुदाय को पर्यावरण के लिए गहरी चिंता करने, सामाजिक दायित्व निभाने और उसकी सुरक्षा और सुधार लाने के लिए किए जा रहे कार्यों में प्रेरित करने में सहायक हो।
4. पर्यावरण समस्याओं के हल खोजने के कौशल प्राप्त करने में सहायक हो।
5. पर्यावरण शिक्षा सभी व्यक्ति, समाज और समुदाय को पर्यावरणीय उपाय तथा शैक्षिक कार्यक्रमों को परिस्थितिक, राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सौंदर्यपरक और शैक्षिक घटकों के परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन करने में सहायक हो।
6. पर्यावरण शिक्षा व्यक्ति, समाज और समुदाय को पर्यावरणीय समस्याओं का उचित ढंग से हल निकालने की आश्वस्तता के प्रति महत्ता और ज़िम्मेदारी की भावना विकसित करने में सहायक हो।

अर्थात् पर्यावरण शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति, समाज व समुदाय में पर्यावरण के प्रति जागरूकता, ज्ञान, अभिवृत्ति, कौशल, मूल्यांकन कुशलता व संभागिता को सुनिश्चित करना है। जनसामान्य को यह सिखाना है कि वह प्रकृति से उतना ही ले जितनी उसे ज़रूरत है, उससे इस प्रकार ले कि पर्यावरण को नुकसान ना हो। हमारी शिक्षा व्यवस्था ने भी पर्यावरण शिक्षा के इन उद्देश्यों को स्वीकार किया है और इनके अनुरूप कार्य योजना को विस्तार देने हेतु प्रयत्नशील है।

पर्यावरण शिक्षा की आवश्यकता

नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के खंड 8 में कहा गया है कि 'वातावरण के प्रति जागरूकता उत्पंन करने की अत्यधिक आवश्यकता है। यह बालकों से आरंभ करके सभी आयु व समाज के सभी वर्गों में व्याप्त होनी चाहिए।' हम सभी जानते हैं कि औद्योगिक क्रांति व वैज्ञानिक उपलब्धियों के फलस्वरूप सुख-सुविधा के संसाधनों ने चारों ओर प्रदूषण फैलाया है। इनसे बचाव हेतु आवश्यक जागरूकता कार्यक्रम पर्यावरण शिक्षा के माध्यम से भली प्रकार दिया जा सकता है। इसी तरह विशाल प्राकृतिक संसाधन की भी कहीं न कहीं अपनी एक सीमा है। उनके उचित और बुद्धिमत्ता पूर्ण उपयोग की ज़रूरत जनसामान्य में पैदा करने हेतु पर्यावरण शिक्षा अति आवश्यक है। तीव्र जनसंख्या वृद्धि सामान्य प्राकृतिक चक्र को अव्यवस्थित कर रही है। अत: तत्संबंधी जागरूकता हेतु भी पर्यावरण शिक्षा अति आवश्यक प्रतीत होती है। आज पर्यावरण प्रदूषण संपूर्ण विश्व की ज्वलंत समस्या है, अत: इस समस्या की अनदेखी के परिणाम भविष्य में बड़े ही घातक हो सकते हैं। विश्व समुदाय को इन प्राकृतिक समस्याओं की जानकारी देना व उनके निराकरण के उपायों से अवगत कराने के लिए पर्यावरण शिक्षा अति आवश्यक है। विज्ञान तकनीकी विकास और परिस्थितिकी के संदर्भ में बदलते सामाजिक मूल्यों का मूल्यांकन करने हेतु भी पर्यावरण शिक्षा की विशेष उपादेयता है। इसकी मदद से मनुष्य की सोच, उसके दृष्टिकोण व व्यवहार में परिवर्तन लाने का प्रयास किया जा सकता है।

पर्यावरण शिक्षा का प्रारूप

भारत में 1988-89 से पर्यावरण शिक्षा कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् ने प्राथमिक व हाईस्कूल के पर्यावरण संबंधी पाठ्यक्रम का निर्धारण भी किया है। परिषद् ने तत्संबंधी पाठ्यपुस्तकें, निर्देशन सामग्री, सूचनात्मक पुस्तकें व दृश्य-श्रव्य सामग्री भी निर्मित की है।[3]

यहाँ ध्यान देना होगा कि पर्यावरण शिक्षा सिर्फ तथ्यों की जानकारी दे दिए जाने तक सीमित नहीं है। चूँकि यहाँ शिक्षा का उद्देश्य बालक-बालिकाओं में तत्संबंधी जागरूकता का संचार भी है। अत: पर्यावरण शिक्षा का प्रारूप विस्तृत होना चाहिए। जिसमें निम्नलिखित पक्ष समाहित किए जा सकते हैं–

(अ) विद्यालयी पाठ्यक्रम

किसी भी विषयवस्तु को शिक्षा में समाहित करने का सबसे सहज तथा प्रभावशाली माध्यम विद्यालयी पाठ्यक्रम होता है। पाठ्यक्रम में सम्मिलित विषयवस्तु कक्षा शिक्षण के माध्यम से

बालकों तक स्वत: पहुँच जाती है। यही कारण है कि *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986* ने शिक्षा के प्रत्येक स्तर (प्राथमिक, माध्यमिक व उच्च शिक्षा) पर पर्यावरण शिक्षा की महत्ता को स्वीकार कर तत्संबंधी स्कूली पाठ्यक्रम निर्माण का उत्तरदायित्व एन.सी.ई.आर.टी. तथा उच्च शिक्षा स्तर के पाठ्यक्रम निर्माण का उत्तरदायित्व इच्छुक विश्वविद्यालयों को सौंपा। विद्यालय पाठ्यक्रम में पर्यावरण शिक्षा को समाहित करने के साथ-साथ हमें इस तथ्य की ओर भी अवश्य ध्यान देना होगा कि यहाँ तत्संबंधी सूचनाएँ शिक्षार्थियों तक पहुँचा देना ही हमारा उद्देश्य नहीं है, यहाँ उद्देश्य तत्संबंधी जागरूकता व संवेदनशीलता उत्पन्न करना भी है। अत: प्राथमिक स्तर पर अपनी प्रकृति, अपने आस-पास के पेड़-पौधों, पक्षियों, जल, थल आदि के लिए बालकों में प्रेम का भाव उत्पन्न करने वाले गीत व कथा, कहानी आदि बड़े ही लाभप्रद हो सकेंगे।

इसके साथ ही तत्संबंधी क्रियाकलाप, जैसे–पौधों को पानी देने से पौधा सूख जाने से बच सका, फूलों को न तोड़ने से वह उससे होने वाले दर्द से बच सका जैसी छोटी-छोटी कहानियाँ उसके दिलो-दिमाग पर ऐसा असर छोड़ सकने में सक्षम हैं कि कक्षा 1-2 का छात्र सुबह-सुबह घर के आस-पास के पौधों को पानी देने को तत्पर दिखाई देगा। हमें अवश्य ही ऐसे छोटे-छोटे गीत व कहानियाँ बच्चों के पाठ्यक्रम में सम्मिलित करने चाहिए।

माध्यमिक स्तर पर इन्हें विस्तार देकर सूचनाप्रद बनाना लाभप्रद हो सकेगा। इस स्तर पर विद्यार्थी प्रकृति, व प्राकृतिक संसाधनों के विषय में समझने लगते हैं। वह अपनी खुद की हानि-लाभ के साथ-साथ सामाजिक लाभ-हानि के संबंध में भी संवेदनशील हो उठते हैं। मानव कल्याण और देश हित में उनकी रुचि दिखाई देती है। अत: इस स्तर पर पर्यावरण शिक्षा पाठ्यक्रम में पर्यावरण की समस्या और उनके घातक परिणामों से छात्र-छात्राओं को परिचित कराया जा सकता है।

उच्च शिक्षा में पर्यावरण शिक्षा के पाठ्यक्रम में तथ्यात्मक विश्लेषण, वास्तविक स्थिति, समस्या के कारण, उसके समाधान के उपाय आदि को समाहित किया जाना लाभप्रद है। इस स्तर तक पाठ्यक्रम को इतना प्रभावपूर्ण बनाना होगा कि यहाँ से विभिन्न व्यवसायों में प्रवेश कर युवा वर्ग पर्यावरण संस्थान के प्रति संवेदनशील रह सके। एक इंजीनियर को उसके द्वारा बनायी गयी मशीन से उत्पन्न प्रदूषण की जानकारी अवश्य हो और वह इसके बचाव के लिए उपायों की खोज भी कर सके, ऐसी तत्परता उसमें अवश्य पैदा की जा सके।

इसी प्रकार एक डॉक्टर, एक वैज्ञानिक, एक शिक्षक, एक वकील, एक प्रशासनिक अधिकारी व एक उद्योगपति को यह अवश्य पता हो कि वह कहाँ-कहाँ पर्यावरण के प्रति असंवेदनाशील है और उसे कहाँ-कहाँ सावधानी बरतने की आवश्यकता है। बेहतर उच्च शिक्षा प्राप्त कर एक उद्योगपति युवा ने यदि एक कारखाना स्थापित कर उच्च स्तर का उत्पादन किया तो बड़ी अच्छी बात है, यहाँ उसकी डिग्री का बेहतर उपयोग हुआ लेकिन कारखाने से निकले विषैले पानी ने यदि नदी नालों को विषैला कर दिया तो बात ठीक नहीं है। अत: उच्च शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर तत्संबंधी व्यवसाय व प्रत्येक व्यवसाय के साथ पर्यावरण को हो रही हानि की जानकारी अवश्य दी जानी चाहिए। नि:संदेह इनसे बचाव का कार्य भी पाठ्यक्रम का हिस्सा होगा।

धेवान (2008) ने शिक्षक प्रशिक्षुओं पर किए गए अपने एक अध्ययन में पाया कि शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम की छात्राध्यापकों व छात्राध्यापिकाओं में पर्यावरण जागरूकता विकसित करने में कोई सार्थक भूमिका नहीं है।[4] यह स्थिति ठीक नहीं है। उच्च शिक्षा के विभिन्न पाठ्यक्रमों में पर्यावरण जागरूकता संबंधी सूचनाएँ व क्रियाकलाप अवश्य समाहित होने चाहिए। कई व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में पर्यावरण शिक्षा को जोड़ा गया है। इंजीनियरिंग कॉलेजों व विश्वविद्यालयों में तथा मेडिकल कॉलेजों के पाठ्यक्रम में एक अवयव के रूप में पढ़ाया जा रहा है। अर्थशास्त्र में नया प्रश्नपत्र 'अर्थशास्त्र में पर्यावरणीय अध्ययन' के नाम से जोड़ा गया है। जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली में स्कूल ऑफ़ एन्वायरनमेंटल साइंस की स्थापना की गयी है।'[5] शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भी पर्यावरण संरक्षण संबंधी कार्ययोजनाओं को समाहित किया जाना चाहिए। दास ने पर्यावरण शिक्षा के पाठ्यक्रम निर्धारण में मुख्यतः अनुकूलता, आकर्षक, उपलब्धता व सर्वसुलभता पर ज़ोर दिए जाने की बात को महत्वपूर्ण माना।[6]

(ब) पाठ्य सहगामी क्रियाएँ

पाठ्यक्रम में सम्मिलित विषयवस्तु छात्र-छात्राओं को प्रायः तथ्यात्मक सूचना प्रदान करने का काम करती है। इन तथ्यात्मक सूचनाओं को पाठ्य सहगामी क्रियाओं के माध्यम से क्रियात्मक रूप दिया जा सकता है। उदाहरणस्वरुप माध्यमिक स्तर की कक्षा में पढ़ाये गए पाठ्यक्रम की उपयोगिता व देखभाल से प्राप्त तथ्यात्मक सूचना को वृक्षारोपण का कार्यक्रम या पर्यावरणीय खेल आदि के द्वारा क्रियात्मक रूप दिया जा सकता है। विद्यालयों में पाठ्य सहगामी क्रियाओं के अंतर्गत पर्यावरण संरक्षण को प्रोत्साहन देने के लिए पर्यावरण गीत प्रतियोगिता, पर्यावरण नाट्य प्रतियोगिता, पर्यावरण चित्रकला प्रतियोगिता व वाद-विवाद और निबंध प्रतियोगिता आदि का आयोजन भी किया जा सकता है। इन प्रतियोगिताओं के माध्यम से विचार विनिमय व संप्रेषण तो हो ही सकेगा। छात्र-छात्राएँ खुलकर अपनी बात कह सकेंगे। उनमें पर्यावरण संरक्षण की रुचि विकसित हो सकेगी।

उच्च शिक्षा संस्थानों में प्रकृति संरक्षण कार्य वृहद पौधारोपण, जलाशयों की सफाई, प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण आदि को पाठ्य सहगामी क्रियाओं में सम्मिलित कर पर्याप्त जागरूकता विकसित की जा सकती है। इसी प्रकार पर्यावरण अध्ययन जैसे विभिन्न शोध प्रोजेक्ट, क्रियात्मक अनुसंधान, पर्यावरण स्थिति प्रतिवेदन तथा पर्यावरण विचार-विनिमय कार्यक्रमों, जैसे सेमिनार, कार्यगोष्ठी, विचारगोष्ठी आदि पर्यावरण शिक्षा हेतु लाभप्रद हो सकते हैं।

(स) जागरूकता कार्यक्रम तथा क्रियाकलाप

विद्यालयों और महाविद्यालयों तक पर्यावरण शिक्षा का विस्तार कर संबंधित समस्या का समाधान पूरी तरह हो सकना संभव नहीं है। प्रकृति की देखभाल का ज़िम्मा धरती पर रहने वाले प्रत्येक मनुष्य का है, इसलिए उसके संरक्षण संबंधी जागरूकता का विस्तार जन-जन तक पहुँचाना होगा। भारत में पर्यावरण के क्षेत्र में विभिन्न आयामों की जानकारी प्राप्त करने, उन पर विचार विमर्श करने और उसे हर स्तर और हर आयु वर्ग के लोगों तक पहुँचाने के लिए आज अनेक

गतिविधियाँ आयोजित की जा रही हैं। इनका संचालन भारत सरकार और राज्य सरकारों के पर्यावरण विभाग के दिशा निर्देश पर आधारित है। इन पर होने वाला आर्थिक व्यय भी दोनों अभिकरण मिलजुल कर कर रहे हैं। क्रियान्वयन का कार्य शैक्षिक संस्थाएँ, पर्यावरण के क्षेत्र में कार्यरत् स्वयंसेवी संस्थाएँ, नेहरू युवा केंद्र, विश्वविद्यालयों के कतिपय विभाग, स्काउट एवं गाइड्स की स्थानीय शाखाएँ, लायन्स एवं रोटरी क्लब आदि के माध्यम से किया जाता है। इन कार्यक्रमों का लक्ष्य पर्यावरण के बारे में सामान्य जानकारी का एकत्रीकरण, नयी जानकारी तथा सूचनाओं की खोज, लोगों तक पहुँचाने के लिए कार्यक्रमों की तैयारी व विभिन्न कार्यकलापों द्वारा जानकारी तथा सूचना लोगों तक पहुँचाना है।

यहाँ ध्यान देना होगा कि पर्यावरण संरक्षण संबंधी नीति नियम बना देने, सम्मेलनों तथा गोष्ठियों आदि से कोई विशेष लाभ तब तक न होगा जब तक कि हम अपनी प्रकृति से प्रेम करना न सीख सकेंगे। चौहान तथा कठैत इसके लिए भारतीय पारंपरिक आदर्शों व नीति नियमों की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट कर प्रकृति प्रेम के भाव को अंगीकृत करने पर ज़ोर देते हैं।[7]

पारंपरिक भारतीय रीति–रिवाज़ पेड़-पौधों, पशु-पक्षियों का पूजन इनके संरक्षण के साथ-साथ इनके प्रति प्रेम का भाव पैदा करते हैं। अत: इन रीति–रिवाज़ों को पुनर्जीवित करना भी पर्यावरण शिक्षा का एक आवश्यक अंग है। शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले प्रौढ़ों के लिए अनौपचारिक माध्यम से पर्यावरणीय शिक्षा दी जानी भी इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम हो सकती है। इन समूहों में धार्मिक और पौराणिक कथाओं द्वारा पर्यावरण संरक्षण संबंधी सकारात्मक संदेश प्रेषित किए जा सकते हैं। चलचित्र, रेडियो, दूरदर्शन, प्रदर्शनी, नारे, पोस्टर आदि के माध्यम से भी देश के जन-जन तक अपने पर्यावरण के प्रति प्रेम व उसकी देख-रेख और संरक्षण की जागरूकता विकसित की जा सकती है।

स्पष्ट है कि वर्तमान परिप्रेक्ष्य में पर्यावरण प्रदूषण एक ऐसी समस्या है जिससे संपूर्ण विश्व ग्रस्त है। स्थितियाँ बद् से बद्तर हो जाएँ उससे पूर्व ही इस दिशा में आवश्यक कदम उठाए जाने चाहिए। शिक्षा को इस दिशा में एक महत्वपूर्ण साधन के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है। आज यह ज़रूरी दिखाई देता है कि आधुनिक जीवन शैली के विस्तार, विकास की गति के साथ तालमेल के बिठाने के क्रम में अपनी प्रकृति के साथ ज़्यादा छेड़-छाड़ न की जाए। नवीन वैज्ञानिक खोजों के साथ यह ज़रूर देखा जाए कि उनके प्रयोग से पर्यावरण को नुकसान न हो। उनसे प्राप्त लाभ का वज़न उनसे होने वाली हानि से कहीं कम न हो। विकास व विस्तार की गति के साथ पर्यावरण के साथ कोई समझौता न स्वीकार करने की मानसिकता पर्यावरण शिक्षा के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाई जा सकती है। अत: इस दिशा में हर संभव प्रयास किए जाने चाहिए।

संदर्भ

गोयल, एम.के. 2012. *पर्यावरण शिक्षा.* अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा. पृ. 374–375

चौहान, रमेश सिंह तथा कठैत, मंजू. 2009. ''पर्यावरण शिक्षा एक ज्वलंत समस्या का अंत'', *शिक्षा चिंतन*, 8,32, त्रिमूर्ति संस्थान, कानपुर, पृ. 27

टंडन, उमा तथा गुप्ता अरुणा. 2000. *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक.* पूर्व संदर्भित पृ. 596

_____. 2012. *उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक.* आलोक प्रकाशन, आगरा पृ. 595

दास, बी.डी. 1987. इवैल्युएशन एंड मॉनिटरिंग ऑफ़ ऐन्वायरनमेंटल एजुकेशन प्रोग्राम विद स्रिजन टू एनर्जी इश्यू इन डेवलपिंग कंट्री, देखिये इन्वायरनमेंटल एजुकेशन फ़ॉर कंज़र्वेशन एंड डेवलपमेंट, देशबंधु तथा जी. बेरब्रेट द्वारा संपादित, इंडियन ऐन्वायरनमेंटल सोसाइटी, इंद्रप्रस्थ स्टेट, नयी दिल्ली, पृ. 527

धेवान, सीमा. 2008. ऐन्वायरनमेंटल अवेयरनेस ऑफ़ ''प्यूपिल टीचर'', इंडियन जर्नल आफ़ टीचर एजुकेशन, अन्वेषिका, नेशनल काउंसिल फ़ॉर टीचर एजुकेशन, 5, 2, दिसंबर, नयी दिल्ली, पृ. 46

फाइनल रिपोर्ट इंटरनेशनल वर्किंग मीटिंग ऑन ऐनवायरमेंटल एजुकेशन द स्कूल करिकुलम. 1987. (इंटरनेशनल यूनियन फ़ॉर कंज़र्वेशन केयर एंड नेचुरल रिसोर्सेज़ 1970) उद्धृत अग्रवाल के.सी. ऐनवायरनमेंटल बायोलॉजी एग्रो बोटेनिकल पब्लिशर्स, बीकानेर, पृ. 306